ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 288-291

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

श्री अरविन्द का जीवन दर्शन और दार्शनिक एवं शैक्षिक विचार

लोकेश यादव Email : lokeshskb@rediffmail.com

Received- 11.11.2020, Revised- 15.11.2020, Accepted - 19.11.2020

सारांश– ***श्री अरविन्द घोष जी का जन्म 15 अगस्त सन 1872 ई.में कोलकाता नगर के एक प्रतिशिष्ठित परिवार में हुआ था। इनके पिता श्री कृष्णधन घोष एक प्रसिद्ध डॉक्टर थे। वे पाश्चात्य संस्कृति के प्रशंसक थे। उनके घर में नौकर भी अंग्रेजी बोलते थे। उनके पिता जी ने उन्हें 7 वर्ष की आयु में इंग्लैण्ड भेज दिया, जिससे वे कृत्रिम अंग्रेज बन जाए, वहाँ शिक्षा प्राप्त करते हुए महान लेखकों एवं कवियों की मौलिक रचनाओं का अध्ययन करने के लिए उन्होंने ग्रीक व लैटिन भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया।***

सन 1893 ई. में श्री अरविन्द 14 वर्ष बाद भारत लौटे और बडौदा के गायकबाड नरेश सामाजीराव के यहाँ 13 वर्ष तक नौकरी करते रहे। सन 1905 में बंग–भंग आंदोलन के समय वे पूरी तरह से राजनीति में आ गये। सन 1914 में उन्होंने आर्य नामक पत्रिका का प्रकाशन किया। पाण्डिचेरी में श्री अरविन्द के साथ अनेक साधक रहने लगे और सन 1926 ई. में अरबिंद आश्रम की स्थापना की। श्री अरविन्द 40 वर्ष तक सर्वांग योग साधना करते रहे। इस महायोगी ने 5 दिसम्बर सन 1950 की रात्रि में महासमाधि ले ली।

कुंजीभूत शब्द–कृत्रिम अंग्रेज, मौलिक रचनाओं, लैटिन भाषा, आंदोलन ।

असिस्टेण्ट प्रोफेसर,–एम0एड0 विभाग, ए0के0कालेज, शिकोहाबाद, फिरोजाबाद, (उ0प्र0), भारत

अनुरूपी लेखक

श्री अरविन्द जी द्वारा स्थापित संस्थाऐं –श्री अरविन्द जी ने एक राजनेता, शिक्षक एवं दार्शनिक के रूप में कार्य किया। उन्होंने कुछ संस्थाओं की स्थापना भी की उनके द्वारा स्थापित संस्थाऐं निम्न प्रकार हैं।

अ. अरबिन्द आश्रम, ब. श्री अरबिन्द अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय केन्द्र

अ. अरबिन्द आश्रम– राजनीति का परित्याग करने के बाद सन 1810 ई. में श्री अरबिन्द ने पाण्डिचेरी में अरबिन्द आश्रम की स्थापना की, किन्तु इसे विद्यालय का रूप नहीं दिया। इसमें कुछ साधक एकत्र हो गये थे और वे आध्यात्मिक साधना में लीन हो गये थे। प्रारम्भ में इसके सदस्यों की संख्या बहुत कम थी। किन्तु संख्या बढती गयी। आश्रम में जाति–पॉति का बन्धन नहीं था।

सन 1920 ई में एक फ्रांसीसी महिला श्री अरबिन्द के दर्शन की ओर आकृष्ट हुई। इनका नाम मीरा रिचार्ड था। उन्होने आश्रम की सदस्यता स्वीकार की और बाद में आश्रम की व्यवस्था व संचालन में भारी योगदान रहा। इन्हें माता जी के नाम से जाना जाता है। आश्रम में आध्यात्मिक चिन्तन पर बल दिया जाता था। आश्रमवासी मन, बचन और कर्म से अपने को पवित्र बनाने का प्रयास करते थे। आश्रम का मुख्य उददेष्य मानवीय प्रेम का विकास करना था। इसलिए संसार की समस्त संस्कृतियों का यह संगम है और सभी संस्कृतियों का यहॉ विकास किया जाता है। आश्रम में यद्यपि पार्याप्त स्वतंत्रता रहती थी किन्तु आध्यात्मिक अनुशासन में सभी रहते थे।

ब. श्री अरबिन्द अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय केन्द्र– सन 1952 ई. में श्री अरबिन्द अन्तर्राश्ट्रीय विश्वविद्यालय केन्द्र की स्थापना की गयी थी। यह विश्वविद्यालय सन 1943 ई. में श्री अरबिन्द द्वारा स्थापित आश्रम स्कूल का विकसित रूप है।

जब आश्रम में साधकों की संख्या बढने लगी, तो सन 1940 में ही साधकों को बच्चों को लाने की आज्ञा दी गई। इस विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, विज्ञान दर्शन तथा अनेक भाषाओं के शिक्षण की व्यवस्था है। इसमें सहशिक्षा है। यह वास्तव में एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है। इस समय लगभग 15 देशों के छात्र इसमें शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

प्रकाशित कार्य – श्री अरबिन्द आध्यात्मिक योगी ही नहीं, वरन वास्तन में कर्मयोगी थे। एकान्त में रहकर उन्होंने चिन्तन किया, उसको उन्होंने लेखनबद्व किया। उन्होंने पुस्तक लिखी।

1. द फाउण्डेशन ऑफ इण्डियन कल्चर (श्री अरविन्द आश्रम प्रकाशन विभाग दिनांक 1 दि0 1998 प्रकाशित)
2. द रिनाइसां इन इण्डिया (श्री अरविन्द आश्रम प्रकाशन विभाग, श्री अरविन्द आश्रम प्रेस द्वारा प्रकाशित)
3. एसेज ऑन गीता (श्री अरविन्द आश्रम प्रकाशन विभाग द्वारा सन 2000 में प्रकाशित)
4. द नेशनल वेल्यू आटर्स (श्री अरबिन्द आश्रम प्रकाशन विभाग द्वारा 1 फरवरी 2000 को प्रकाशित)
5. लाइफ डिवाइन (श्री अरविन्द आश्रम प्रकाशन विभाग, द्वारा 1 जुलाई 2010 को प्रकाशित) 12 मार्च सन 1906 ई को बारीन्द्र घोष ने कलकत्ता में 'युगान्तर' नाम एक अंग्रेजी साप्ताहिक आरम्भ किया, इसमें श्री अरविन्द के लेख छपते रहते थे। 6 अगस्त सन 1906 को विपिन चन्द्र पॉल ने बन्देमातरम नामक अंग्रेजी साप्ताहिक आरम्भ किया। इसमें श्री अरविन्द जी शामिल हो गये। सन 1909

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

के मध्य में श्री अरबिन्द ने कर्मयोगिन नामक साप्ताहिक पत्र आरम्भ किया। इनका प्रथम संस्करण जून 1909 को तथा अन्तिम संस्करण 5 फरवरी 1910 को प्रकाषित हुआ। सन् 1910 में पण्डिचेरी आने के बाद उन्होंने किसी प्रकार के लेख चार वर्षों तक नहीं लिखे। सन 1914 में उन्होंने एक दार्शनिक, आध्यात्मिक, मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया और अनेक आध्यात्मिक लेख लिखे।

ईशोप निषद, गीता प्रबन्ध दिव्य जीवन योग समन्वय आदि ये सभी लेख अंग्रेजी भाषा में लिखे और 'आर्य' में प्रकाशित हुए। प्राचीन भारतीय परम्परा में उन्होंने उपनिशदों और गीता की व्याख्या की। इनका सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ दिव्य जीवन है, इसके दो भाग है –

1. मानव एकता का आदर्श।
2. मानव चक्र।

श्री अरबिन्द जी के दार्शनिक विचार– श्री अरविन्द जी के शिक्षा दर्शन का आधार आध्यात्मिक साधना ब्रहमचर्य तथा योग पर आधारित है । जिस शिक्षा पद्वति में ये तीनों पक्ष होंगे, उसी से मनुष्य का पूर्ण विकास होगा। मनुष्य में ईश्वर को पहचानने की शक्ति होती है। श्री अरविन्दो आधुनिक युग में उपनिषदों के दृष्टा के अवतार है। परन्तु शंकर, रामानुज इत्यादि के समान भाष्कार नहीं है।

श्री अरविन्द कोरे रहस्यवादी अथवा दृष्टा ही नहीं बल्कि शंकार और ब्रडेल के जोड के तार्किक और काण्ट तथा हेगेले के समान बुद्विवादी है। दर्शन पूर्ण अनुभव और अदम्य बुद्वि का अनुभव सामजस्य है। जो आध्यात्मिक विकास में सहायक है। उनके विचार निम्न प्रकार है ं –

सर्वांग दर्शन– अरबिन्दों एक आदर्शवादी थे एवं उपनिषदों के दर्षन के समकक्ष थे। उन्होंने जीवन में आध्यात्मिक साधना, योग एवं ब्रहमचर्य को अधिक महत्व दिया। वे विकास के सिद्वान्त पर विश्वास करते थे। विकास का लक्ष्य संसार में व्याप्त दिव्यशक्ति का बोध प्राप्त करना है । विश्व में विकासशील प्राणियों का एक ही लक्ष्य है, वह है पूर्ण और अखण्ड चेतना की प्रप्ति।

मानव इस चेतना की प्राप्ति के उपरान्त अपना विकास करता हुआ, अन्तिम स्तर को प्राप्त करता है। और स्वयं अति मानव बन जाता है। इस स्तर पर पहुॅचकर वह सुख और शांति का अनुभव करता है। तथा उसे संसार में ब्याप्त सत्ता का बोध होता है। श्री अरबिन्दो के अनुसार –मानवता, विश्वात्मा एवं परमात्मा तीनों ही परमृसत्य है।

ज्ञान और अज्ञान– श्री अरबिन्द जी ने ज्ञान और अज्ञान को परस्पर विरूद्व नहीं माना है। अविद्या से विद्या, भोग से त्याग, संसार में सन्यास, आत्मा में सर्वभूत, सर्वभूत में आत्मा, भगवान में जगत, जगत में भगवान यह उपलब्धि ही वास्तविक ज्ञान है। अज्ञानता का वास्तिविक गन्तव्य अन्य कोई अप्रकाषित परिवर्तन नहीं बल्कि ज्ञान ही है। वास्तविक में जो कुछ हो रहा है। वह यह है कि "अज्ञान खोज रहा है, और प्रगतिशील ज्योति द्वारा अपने अन्धकार को ज्ञान में परिवर्तन करने की चेष्टा कर रहा है। जोकि पहले ही उसमें सम्मिलित है।"

ब्रहा और ईश्वर– आधुनिक काल में श्री अरबिन्द जी अनुभव उपनिषदों के सर्बांग ब्रहाप्रेता के समान ही है ं ब्रहा निर्गुण भी है और सर्गुण भी है, एक भी है और अनेक भी है स्थिर भी है और गतिशील भी। उपनिषदों ने ब्रहा का नेति–नेति और इति–इति दोनों ही रूपों में वर्णन किया है । ब्रहा संसार में है और संसार से परे भी है वही ईश्वर है। ईष्वर को माया ठहराने पर धर्म के गुहा अनुभव पारिमार्लिक दृश्टिकोण से निरर्थक और मिथ्या हो जाते हैं। ईष्वर सृश्टा पालनकर्ता और हन्ता भी है। उपनिषदों के शब्दों में "यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातनि जीवन्ति यत् प्रयन्त्यभि संविशन्ति तद विजि ज्ञासस्व तद ब्रहा।" ईश्वर ही सृष्टि का सार रूप है विश्व उसी के रूप का विकास मात्र है। वही सृष्टि का प्रथम और अंतिम भौतिक और प्रेरक कारण है। अतः श्री अरविन्द जी के अनुसार परब्रहा होने के कारण ईश्वर स्वयं ही निरपेक्ष भी है। वहन तो आत्मा है न माया, न सम्भूति, न असम्भूति, न सत, न असत, न निर्गुण, न सगुण, न चेतना, न जड, न पुरूष, न प्रकृति, न आनन्द, न निरानन्द, न मनुष्य, न देवता, न पशु वह इन सब से परे है। वह है और स्वयं ही वह सब बन जाता है।

मृत्यु व पुनर्जन्म– श्री अरबिन्द का विचार है कि नये विचार के इस युग में हमें दो चीजें समझ लेनी है। एक मृत्यु के बारे में और दूसरी पुनर्जन्म के बारे में। अभी तक लोगों का यह विचार था कि विधाता ने लिख दिया है– इतने श्वांस इसके बाद मौत निश्चित है वह इस विचार को नहीं मानते। उनका मानना है कि योग साधना से जीवन लम्बाया जा सकता है। उसके लम्बाने की कोई सीमा नहीं है और इस जीवन को लम्बाने से ही पूर्ण योग की सिद्वि हो सकती है, क्यों कि जितने वर्ष हमारे पास हैं उसमें पूर्ण योग की सिद्वि होना मुश्किल है। जो प्रक्रिया या तरीका जीवन को लम्बाने का है वही तरीका आगे चलकर मृत्यु को जीत लेने का होगा। श्री अरविन्द का एक सन्देश और भी है कि आज जो हडडी, मांस तथा चमडी का शरीर है वह इस नये विचार से तेजोमय शरीर हो जायेगा। उस शरीरा को भोजन की आवश्यक्ता नहीं। एक बार इस नूतन शरीर का निर्माण होगा, तब आत्मा को शरीर को लेना होगा, तो लेलेगी, जितने वर्ष, जितने समय रखना होगा, तो रखेगी और जब छोडना होगा, तब छोड देगी ।

जीवात्मा– श्री अरबिन्द के अनुसार – ब्रहा जड, प्राण एवं मन के पीछे अन्तरंग जड, प्राण और मानस है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

इसी प्रकार पुरूष भी दो है – ब्रहा पुरूष अथवा इच्छा पुरूष। जोकि हमारी वासनाओं और शक्ति से ज्ञान तथा प्रसन्नता प्राप्त करने के प्रयत्नों में कार्य करता है। और अन्तरंग पुरूष अथवा वास्तविक मानस पुरूष जो प्रकाश, प्रेम, प्रसन्नता और सत्ता के परिष्कृत सत्य की एक षुद्व शक्ति है। मनुष्य की सत्ता का निर्माण इन तत्वों से हुआ है। हत्पुरूष, आन्तरिक मनोमय, प्राणमय और आनन्द मय पुरूष और ब्रहापुरूष। मन, प्राण एवं शरीर की वाह्य प्रकृति आन्तर पुरूषों के वाहर प्रकट होने का यन्त्र या कारण है पर इन सव के ऊपर जीवात्मा जो अपनी अभिव्यक्ति के लिए इन सवका व्यवहार कराता है वह स्वयं परमात्मा का ही अंश है। पर मनुष्य का यह सत्य स्वरूप उसके ब्रहा स्वरूप में छिपा रहता है। जो अपने अन्तरमय स्वरूप और अन्तरात्मा के स्थान पर मनोमय और प्राणमय अहंकार का ला बिठाता है। केन्द्रीय पुरूष का प्रयोग श्री अरबिन्द के दर्शन में साधारणतया परमात्मा के उस अंश के लिए होता है। जो हमारे अन्दर है, जो हमारे अन्य तत्वों को धारण करता है और जन्म मृत्यु से परे रहता है। जीवात्मा अध्यक्ष रूप से जीवन के व्यक्तिकरण के ऊपर रहता है, हत्पुरूष जीवन के व्यक्तिकरण के पीछे रहकर उसको धारण करता है ।

माता– संसार की सृजनकृत्री शक्ति चित्त की शक्ति है। यदि हम इस चेतनशक्ति को समस्त सत्ता का तत्व रूप मान ले तो शुद्व श्रद्वा भी गतिशील हो जायेगी । अतः इस चेतन शक्ति को शुद्व सत्ता में सम्मिलित मानना पडेगा। वास्तव में चित्त शक्ति स्वभाव भी है। विकास के मूल रूप में आधारित इस चेतनशक्ति को श्री अरविन्द ने सृजनात्मक तत्व कहा है।

श्री अरविन्द के शैक्षिक विचार– श्री अरविंद एक महान दार्शनिक थे, किन्तु इन दार्शनिक सिद्वांतों को मानव जीवन में चरिताथ्र करने के लिए एक विषेश शिक्षा की आवश्यकता थी।

राष्ट्रोत्थान के लिए भी तत्कालीन शिक्षा उपयुक्त नहीं थी। उन्होंने शिक्षा पर शिक्षा सम्बन्धी अपने विचार फुटकर रूप में प्रस्तुत किऐ हैं और एक पुस्तक 'नेशनल सिस्टम ऑफ एजूकेशन' में विचार दिए हैं।

शिक्षा की अवधारणा– श्री अरबिन्द घोष जी भारतीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षा के पुजारी थे। उनका विचार था कि हमारी शिक्षा भारतीय आवश्यकता, प्रकृति, संस्कार, सभ्यता के अनुसार हो, श्री अरबिंद जी के अनुसार–वास्तविक शिक्षा बच्चे को एक स्वतंत्र और सृजनशील पर्यावरण प्रदान करती है और उनके हितों में वृद्धि करके सृजनशीलता, मानसिक, नैतिक और सौन्दर्य की अनुभूतियॉ अन्ततः उसकी शक्तियों को विकास की ओर बढाती है। उन्होंने शिक्षा के बारे में कहा–"केवल वही सत्य और सजीव शिक्षा होगी जो कि एक व्यक्ति (मानव) में विद्यमान समस्त गुणों का पूर्ण लाभ साकार करने में सहायक बनाती है।"

श्री अरविन्द जी के अनुसार– "शिक्षा मानव के मस्तिष्क और आत्मा की शक्तियों का निर्माण करती है । यह ज्ञान चरित्र और संस्कृति का उत्कर्ष करती है।"

शिक्षा के उद्देश्य– श्री अरविन्द ने प्रचलित शिक्षा को दोषपूर्ण बताया है और कहा यदि यह शिक्षा बालक का पूर्ण विकास कर सकने में असमर्थ है, क्योंकि यह सूचनाओं के संग्रह मात्र के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। शिक्षा का कार्य तो बालक के शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, नैतिक एवं आध्यात्मिक भावना का विकास करना है। उन्होंने शिक्षा के निम्नलिखित उद्देष्य बताऐ हैं –

1. शारीरिक (भौतिक) शुद्धि– श्री अरबिन्द शिक्षा द्वारा पंच महाभौतिक वस्तु जगत का ज्ञान करा देना चाहते थे । इसके लिए शिक्षा का उददेष्य बालक के शरीर का पूर्ण विकास होना चाहिए और उसमें पवित्रता आनी चाहिए, शरीर ही धर्म साधना का माध्यम है अतः श्री अरविन्द ने शरीर के विकास के साथ उसके शुद्वीकरण पर बल दिया क्यों कि ठीक प्राकर से स्वस्थ न होने पर शुद्वि के अभाव में अन्ति लक्ष्य आध्यात्मि विकास सम्भव नहीं है अतः शिक्षा द्वारा सर्वप्रथम शरीर स्वस्थ एवं पवित्र होना चाहिए।

2. ज्ञानेन्द्रियों का विकास– श्री अरविंद ने अपने 'नेशनल सिस्टम ऑफ एजूकेशन' में ज्ञानेन्द्रियों के प्रशिक्षण एवं उनके विकास को बहुत महत्वपूर्ण माना है। उनके अनुसार सभी ज्ञानेन्द्रियों दृष्टि, श्रवण, स्पर्श, ध्राण और स्वाद आदि का भली प्रकार प्रशिक्षण होना चाहिए। इन्द्रियों के स्वस्थ विकास के लिए उन्होंने स्नायु, चित्त और मानस का शुद्व होना बताया है। इस प्रकार शिक्षा द्वारा और साधना के माध्यम से ज्ञानेन्द्रियों को विकसित किया जाना चाहिए ।

3. प्राणिक विकास– प्राण का अर्थ उस शक्ति या ऊर्जा से है, जिसके कारण संसार में परिवर्तन होता है। मानव की प्राण षक्ति को सही दिशा में लगाना आवश्यक है। क्यों कि इससे नैतिक एवं चारित्रिक गुणों में विकास होता है और इच्छा शक्ति को दृढ किया जा सकता है। प्राण की बडी प्रवल ऊर्जा है, इसकी शुद्धिकरण से विकास की गति बहुत तीव्र हो जाती है निम्न प्राण में इच्छाऐं, मॉगे, आवेग, काम, क्रोध, लोभ आदि अनेक दोश होते हैं। इनके त्याग से प्राण विशाल और सवल हो जाता है ओर शुद्व होने पर यह भगवान का महान यन्त्र बन जाता है। अतः शिक्षा से प्राणिक शक्ति का विकास होना आवश्यक है

4. मानसिक विकास– मन हमारी सत्ता का सवसे चंचल भाग है। श्री अरविन्द के दर्शन एवं उनकी शिक्षा की सर्वश्रेष्ठ व्याख्याता माता जी है। उन्होंने मन की शिक्षा के पॉच अंग बताये हैं।

1. एकाग्रता की शक्ति जागृत करना।

PIF-7.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

2. मन की व्यापकता और समृद्व बढाना
3. उच्चतम लक्ष्य की ओर विचारों को संगठित करना।
4. विचारों को संयमित करना
5. अनिष्ठ विचारों को त्यागना और मानसिक स्थिरता का विकास करना।

इनके लिए श्री अरविन्द ने योगसाधना द्वारा मनुष्य की स्मृति, चिन्तन, तर्क, कल्पना और निर्णय लेने की शक्ति तथा सभी मानसिक शक्तियों का विकास करना बताया है। मन ही मानव की उन्नति और पतन का कारण है। अतः उसे सदैव योग द्वारा अभ्यास ओर वैराग्य भावना के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

5. नैतिक विकास– श्री अरविन्द ने कहा है कि नैतिक विकास और संवेगात्मक पूर्णता के विना मानसिक शिक्षा मानव प्रगति के लिए हानिकारक होती है उन्होंने नैतिक विकास के लिए निम्न मुख्य विन्दु बताये हैं–
(1) संवेग (2) संस्कार या आदतें
(3) स्वभाव या प्रकृति।

6. अन्तः करण (अन्तरात्मिक) विकास– श्री अरविन्द ने अन्तः करण के चार स्तर बताऐ –
(1) चित्त (2) बुद्धि (3) मन
(4) अन्तर्ज्ञान

7. आध्यात्मिक विकास– श्री अरविन्द के मानव विकास के तीन अन्तिम सोपान बातये हैं ।
1. आनंद 2. चित्त 3. सत

1. आनंद– वे कहते हैं कि आनन्द वह अवस्था है जिसमें मनुष्य सुख– दुःख की अनुभूति नहीं कर सकता है ।

2. चित्त– वह चेतना शक्ति है जिससे मनुष्य अपने जगत ओर सत के स्वरूप को जान सकता है ।

3. सत् – सुत शुद्व अस्तित्व का नाम है , इसलिए सत ही ईश्वर है और ईश्वर ही सत है ।

पाठ्यक्रम– श्री अरबिन्द घोष के जीवन का स्त्रोत आध्यात्मिक और आधार भौतिक है अतः वे शिक्षा के प्राठ्यक्रम में उन सभी विषयों का समावेश चाहते थे, जिनसे व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास सम्भव हो सके। अतः उन्होंने पाठ्यक्र के निर्माण में निम्न सिद्धान्तों का समर्थन किया –
(1) पाठ्यक्रम रूचिकर हो।
(2) पाठ्यक्रम में उन समस्त विषयों को स्थान दिया जाऐ, जिनसे बालक का शारीरिक, मानसिक, अध्यात्मिक, भावनात्मक और वौद्धिक विकास हो सके।
(3) पाठ्यकम आकर्षक हो।
(4) पाठ्यकम बालक के जीवन की वास्तविक क्रियाओं से सम्बनिधत हो।
(5) पाठ्यकम ऐसा हो, जो बालक में विश्वज्ञान रूचि जाग्रत कर सके।

इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर उन्होंने बालक के सर्वागीण विकास हेतु शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रम के अन्तर्गत निम्न विषयों को स्थान प्रदान किया –

(1) प्राथमिक स्तर– मातृभाषा, आंग्रेजी, फ्रेंच, साहित्य, सामान्य विज्ञान, चित्रकला, राष्ट्रीय इतिहास, गणित, सामाजिक अध्ययन, खेलकूद, व्यायाम।

(2) माध्यमिक स्तर– मातृभाषा, आंग्रेजी, फ्रेंच, गणित, कला, स्वास्थ्य विज्ञान, समाजिक विषय, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, वागवानी, कृषि, भजन कीर्तन, ध्यान व योग।

(3) विश्वविद्यालय स्तर– अंग्रेजी साहित्य, फ्रेच साहित्य, गणित, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, विज्ञान का इतिहास, सभ्यता का इतिहास, जीव का विज्ञान, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, भारतीय व पाश्चात्य दर्शन, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध एवं विश्व एकीकरण और कृषि, ध्यान व योग।

(4) व्यावसायिक शिक्षा– सिविल, मैकेनिकल तथा इलेक्ट्रीकल, इंन्जीनियर, नर्सिंग, टंकण, आशुलिपि, काश्ठकला, शिल्पकला, शिल्पकारी, सिलाई, कुटीर उद्योग, चित्रकारी, भारतीय तथा यूरोपीय संगीत और नृत्य ।

शिक्षण विधियॉं–
1. बालक की स्वतन्त्रता,
2. करके सीखने पर बल,
3. स्वंय प्रयत्न और अनुभव द्वारा सीखना
4. प्रेम और सहानुभूतिपूर्ण वातावरण में शिक्षा,
5. बालक की रूचि के अनुसार शिक्षा,
6. मातृभाषा द्वारा शिक्षा ,

अनुशासन– श्री अरबिन्द घोष जी आदर्शवादी विचारधरा से अधिक प्रभावित थे। परन्तु उनके अनुषासन सम्वन्धी विचार प्रकृतिवादियों से मिलते–जुलते थे। उन्होंने शिक्षा में कठोर और दमनात्मक अनुशासन का घोर विरोध किया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ सक्सेना, सरोज : शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय आधार प्रकाशन–साहित्य प्रकाशन, आगरा, (2008) (उ0प्र0)।
2. डॉ पाण्डेय, रामशकल : शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि, प्रकाशन – श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, (2009).
3 डॉ पाण्डेय, रामशकल : षिक्षा दर्षन प्रका0 अग्रवाल पब्लिकेषन्स आगरा, 2009.
4 डॉ पाण्डेय, रामशक्त : शिक्षा के दार्शनिक सिद्वांत प्रकाशक– अगवाल पब्लिकेशन्स आगरा, 2010 उ0प्र0।
5. डॉ वर्मा, श्याम बहादुर :श्री अरबिन्द विचार दर्शन प्रका0– अरबिन्द प्रकाशन दिल्ली, 1974.
6 स्वामी रामतीर्थ : सफलता का रहस्य प्रका0 श्री अरबिन्द प्रकाशन , दिल्ली, 1971.

*****

PIF-7.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*